द्वितीय अध्याय

ज्ञानरंजन की कहानियों का सामान्य परिचय

''ज्ञानरंजन की कहानियों का सामान्य परिचय''

2.1 ज्ञानरंजन के पूर्ववर्ती कहानीकारों तथा उनकी प्रमुख रचनाओं का सामान्य परिचय।

2.1.1. भारतेंदु युग -

इस युग में आधुनिक कलात्मक कहानी का आरंभ नहीं हुआ था। सिर्फ कहानियों के नाम पर, कथा: संग्रह प्रकाशित थे जैसे मुंशी नवलकिशोर - 'मनोहर कहानी' तथा अंबिकादत्त व्यास - 'कथा कुसुम कलिका' आदि हैं। यह लोक-प्रधान कथाएँ हैं जिन्हें तत्कालीन लेखकों ने स्वयं लिखकर या लिखाकर संपादन करके प्रकाशित करा दिया। कहानी के नाम पर जिन स्वप्न-कथाओं का उल्लेख किया गया है, वे वस्तुत: कथात्मक निबंध हैं।

2.1.2. द्विवेदी युग -

इस युग में 'सरस्वती' पत्रिका का प्रकाशन हुआ और साथ ही हिंदी कहानी का जन्म हुआ। किशोरीलाल गोस्वामी की 'इंदुमती' भगवानदीन की 'प्लेग की चुड़ैल', रामचंद्र शुक्ल की 'ग्यारह वर्ष का समय', बंग महिला की 'दुलाईवाली', वृंदावनलाल वर्मा की 'राखीबंद भाई', चंद्रधर शर्मा गुलेरी की 'उसने कहा था', ज्वालादत्त शर्मा की 'मिलन', विश्वम्भरनाथ शर्मा कौशिक की 'रक्षाबंधन' आदि इस युग के प्रमुख कहानीकार और उनकी कहानियाँ हैं। सन् 1918 में काशी से 'हिंदी गल्पमाला' नामक मासिक पत्र का प्रकाशन आरंभ हुआ जिसमें जयशंकर प्रसाद गंगाप्रसाद श्रीवास्तव, इलाचंद्र जोशी आदि ने अपनी प्रारंभिक कहानियाँ लिखी थीं। उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि सन् 1900 के लगभग मौलिक हिंदी कहानी का जन्म हुआ और सन् 1912 से 1918 ई. के बीच वह पूर्णत: प्रतिष्ठित हो गई। साहित्य में उसकी स्वतंत्र सत्ता भी मान्य हुई और उसका मौलिक रूप निखरा।

2.1.3. छायावाद युग -

प्रेमचंद इस युग के प्रमुख कहानीकार हैं। उनकी 'बलिदान', 'आत्माराम' आदि प्रारंभिक कहानियाँ हैं। उन्होंने ग्रामीण जीवन के साथ शहरी जीवन का भी चित्रण किया है। उन्होंने कहानियों में कस्बाई जीवन, किसान जीवन, सत्याग्रह, आंदोलन तथा साहुकार, जमीनदार, क्लर्कों आदि की समस्याओं को लेकर

चित्रण किया है। 'ग्राम' जयशंकर प्रसाद की प्रथम कहानी है। उनके 'आकाशदीप', 'इंद्रजाल', 'छाया', 'प्रतिध्वनि' आदि कहानी: संग्रह महत्त्वपूर्ण हैं। उन्होंने जीवन का यथार्थ चित्रण करने की जगह कल्पना को अधिक महत्त्व दिया है। विश्वम्भरनाथ शर्मा 'कौशिक' के 'प्रेम-प्रतिमा', 'मणिमाला' आदि कहानी: संग्रह प्रकाशित हैं। उन्होंने पारिवारिक समस्याएँ, बालविवाह, पर्दा-प्रथा, दहेज-प्रथा आदि को चित्रित किया है। सुदर्शन की 'गल्पमंजरी', 'परिवर्तन' कहानियाँ समाज का चित्रण करती हैं। पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र' की 'बलात्कार', 'दो जख की आग' आदि कहानियों में अनुभूति की तीव्रता कम है और सामाजिक शोषण, अनाचार के प्रति आक्रोश अधिक है। जैनेंद्र ने मनोवैज्ञानिक और नारी विषयक अधिक कहानियाँ लिखी हैं। उनकी नारी पतिवृत्य की चारदीवारी से बाहर निकलकर मुक्ति की सांस लेना चाहती है। अन्य कहानीकारों में राधिकारमणप्रसाद सिंह, भगवती प्रसाद वाजपेयी आदि हैं। महिला कहानीकारों में सुभद्राकुमारी चौहान, शिवरानी देवी, उषादेवी मित्रा आदि प्रमुख हैं। इस युग में हिंदी कहानी अपने विकास की प्रारंभिक अवस्थाओं को पार कर वहाँ पहुँच गई हैं, जहाँ से हमें इसके रूप के दर्शन होने लगते हैं।

2.1.4. छायावादोत्तर युग -

इस युग में यशपाल के 'वो दुनिया', 'ज्ञानदान', 'अभिशप्त' आदि कहानी संग्रह प्रकाशित हुए। वर्गसंघर्ष, मनोविश्लेषण, व्यंग्य आदि का चित्रण उनकी कहानियों में प्रधानता से हुआ है। अज्ञेय के 'विपथगा', 'परंपरा', 'शरणार्थी' आदि कहानी: संग्रह हैं। उन्होंने आत्मसंघर्ष, व्यक्ति और परिवेश संघर्ष का चित्रण किया हैं। इलाचंद्र जोशी के 'खंड़हर की आत्माएँ', 'ड़ायरी के नीरस पृष्ठ' कहानी: संग्रह हैं। उन्होंने मनोविश्लेषणात्मक कहानियाँ लिखी हैं। इस युग में उपेंद्रनाथ अश्क, कमल जोशी, निर्गुण, अमृतराय आदि कहानीकारों का योगदान भी महत्त्वपूर्ण हैं।

2.1.5. नई कहानी -

मोहन राकेश, राजेंद्र यादव और कमलेश्वर नई कहानी के आधार स्तंभ माने जाते हैं। मोहन राकेश ने जीवन में अनेक तनावों को झेला, भोगा और उन्हें अपनी कहानियों में अभिव्यंजित किया हैं। उनके 'नए-बादल', 'जानवर और जानवर' आदि कहानी संग्रह महत्त्वपूर्ण हैं। राजेंद्र यादव ने सामाजिक कहानियाँ

लिखी - 'जहाँ लक्ष्मी कैद है', 'प्रतीक्षा' आदि उनकी कहानियाँ प्रसिद्ध हैं। कमलेश्वर की 'मांस का दरिया', 'बचपन', 'वेश्या' आदि कहानियाँ महत्त्वपूर्ण हैं। उन्होंने अलग-अलग सामाजिक समस्याओं को उठाया हैं। अन्य कहानीकारों में निर्मल वर्मा, मार्कंडेय, रेणु, शिवप्रसाद सिंह, शेखर जोशी आदि महत्त्वपूर्ण कहानीकार हैं। सचेतन कहानी लेखकों में महीपसिंह, मनहर चौहान, कुलभूषण, हिमांशु जोशी आदि कहानीकार महत्त्वपूर्ण हैं।

2.2. समकालीन हिंदी कहानी साहित्य का इतिहास -

2.2.1. युगीन परिवेश -

साहित्य समाज का दर्पण माना जाता है। साहित्य समाज से हटकर नहीं हो सकता। साहित्यकार और तत्कालीन सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक परिस्थितियों का घनिष्ठ संबंध होता है। साहित्यकार पर युगीन सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक परिवेश का प्रभाव दिखाई देता है। अत: हमारे विवेच्य विषय की दृष्टि से सन् 60 के बाद का परिवेश देखना महत्त्वपूर्ण है।

2.2.1.1. सामाजिक परिवेश -

सन् 60 के बाद देश में अकाल और युद्ध के कारण अनेक समस्याएँ निर्माण हो गई थी। समाज पूरी तरह से निकम्मा हो गया था। पुष्पपाल सिंह अपनी पुस्तक 'समकालीन कहानी: सोच और समझ' में सन् 60 के बाद की सामाजिक परिवेश के विषय में लिखते हैं - ''जीवन जीने की विषमतर स्थितियों में 1960- 65 के बीच कहानी नया रूप ग्रहण करती है, जिस कारण साठोत्तरी कहानी, जैसे अभिमान भी प्रचार में आए। यह वह समय हैं जब 1962 ई. में. 'हिंदी चीनी-भाई-भाई' के नारे को निरर्थक साबित करते हुए पड़ोसी चीन ने हमारी सरहदों को रौंद दिया और समस्त राष्ट्र को लज्जा जनक हार तथा निराशा का घूँट पीना पड़ा। फिर 1965 ई. में हुए भारत-पाक युद्ध में प्राप्त विजय ने देश को एक अपुर्व आत्मविश्वास प्रदान किया किंतु इसके साथ ही भयंकर सूखा और अकाल की स्थितियों ने देश में नक्सलवादी प्रवृत्तियों का बोलबाला, मुद्रा-स्फीति और मुद्रा-अवमूल्यन से उत्पन्न भयंकर संकट सुरसा-सॉं-मुँह फाड़ती मँहगाई, खादयान्नों आदि का संकट और इस संबंध में देश की परमुखापेक्षित आवश्यकता की विभिन्न वस्तुओं पर राशन और उनकी प्राप्ति के लिए लंबी-लंबी कतारें देश में

दिन-प्रतिदिन बढ़ती शिक्षित बेरोजगारी और उससे उत्पन्न आक्रोश, क्षोभ, देश में वामपंची चिंतन को बढ़ावा, काँग्रेस तक में वामपंथी दल का अभ्युदय आदि स्थितियों ने जीवन जीने की स्थितियों को ऐसा जटिल और संक्रांत बना दिया कि कथाकार को अपना परिवेश पूरी तरह बदला हुआ मिला।"[1] अत: स्पष्ट है कि सन् 60 के बाद का सामाजिक परिवेश अत्यंत दयनीय हो गया था।

2.2.1.2 आर्थिक परिवेश -

अर्थ किसी भी देश के विकास की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। जिस देश में आर्थिक संपन्नता हो उस देश का विकास अधिक तीव्र गति से होता है। सन् 60 के बाद हमारे देश को दो बार युद्ध का सामना करना पड़ा है। युद्ध के कारण देश की आर्थिक स्थिति अतिशय गंभीर हो गई थी। पुष्पपाल सिंह उस वक्त के आर्थिक परिवेश के बारे में लिखते हैं - "65 के पश्चात आर्थिक दृष्टि से सामान्य भारतीय का जीवन अत्यंत कठिन हो गया। सन् 62,65 एवं 71 के भारत चीन युद्धों का अर्थव्यवस्था पर पड़ता दबाव, अकाल, सूखा और अतिवृष्टि के कारण देश में बढ़ती भुखमरी और कितने की खाद्य पदार्थों के अभाव से उत्पन्न संकट, मुद्रा-स्फीति और मुद्रा-अवमूल्यन के कारण मुद्रा की क्रयशक्ति का ऱ्हास और उससे उत्पन्न नैराश्य, कमरतोड़ मँहगाई, करो और मार आदि ने 60-65 के बाद जीवन की स्थितियों को विकरालतर बना दिया। शिक्षा, योग्यता और प्रतिभा की दारूण अवमानना और भ्रष्ट व्यवस्था में भाई-भतीजावाद के प्रश्रय ने युवा-मानस के स्वप्नों को तोड़ उसे घोर आर्थिक यंत्रणा में ड़ाल दिया।"[2] इससे युगीन आर्थिक परिवेश व्यक्त होता है।

2.2.1.3. राजनीतिक परिवेश -

देश को आजादी मिलने से पहले लोगों का सपना था कि आजादी के बाद देश में शांति होगी, सभी ओर सुख-ही-सुख होगा लेकिन आजादी मिलने के बाद सबकुछ उल्टा हो गया। लोगों के सपने मिट्टी में मिल गए। देश को आजादी मिल गई और रक्षक ही भक्षक बन गए। देशी शोषकों का प्रमाण बढ़ गया। स्वार्थी देश सेवा करनेवाले नेता लोगों ने जनता का प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष शोषण करना शुरू किया। सत्ता के लिए अनेक पक्ष-विपक्ष निर्माण हो गए। देश के आधारस्तंभ देश के युवकों को नेता द्वारा दिशाहीन बनाया गया। इस प्रकार जटिल राजनीतिक परिवेश के कारण देश में अस्थिरता निर्माण हो गई थी।

2.3. सातवें दशक के कहानीकार -

सातवें दशक के कहानीकारों का स्थान अन्य कहानीकारों से अधिक महत्त्वपूर्ण है। इस दशक के कहानीकारों ने देश को पारतंत्र्य में भी देखा है और स्वातंत्र्य में भी देश को आजादी मिल गई लेकिन देश में अनेक समस्याएँ निर्माण हो गई। इसका यथार्थ चित्रण इस दशक के कहानीकारों ने सूक्ष्मता से किया है। शिवकुमार शर्मा कहते हैं - "ये कहानियाँ प्राय: उन लेखकों की हैं जो स्वाधीन भारत में जन्में और बड़े हुए तथा जिन्हें देखने को मिला स्वतंत्र भारत का क्रूर यथार्थ, स्वार्थ परायण व्यवस्था, भाई-भतीजावाद, भ्रष्टाचार, समाज की विषम भयावह विसंगतियाँ, बेकारी, अकेलापन, संत्रास, असुरक्षा तथा स्वार्थ, निहित न्याय व शासन।"[3] इन सभी विषम परिस्थितियों को सातवें दशक के कहानीकारों ने यथार्थ रूप से चित्रित किया है। सातवें दशक के प्रमुख कहानीकार और उनकी प्रसिद्ध रचनाओं का संक्षिप्त विवेचन निम्नानुसार है -

महेंद्र भल्ला - 'एक पति के नोटस्', दुधनाथ सिंह - 'रीछ', ज्ञानरंजन - 'फेंस के इधर और उधर', रवींद्र कालिया - 'बड़े शहर का आदमी', से. रा. यात्री - 'धब्बे', सुधा आरोड़ा - 'अविवाहित पृष्ठ', धर्मेंद्र गुप्त - 'नए-पुराने जूतों का साथी', गिरिराज किशोर - 'मम्मी', ममता कालिया - 'छिटकी हुई जिंदगी', योगेश गुप्त - 'सायों की नदी', गंगाप्रसाद विमल - 'उसका साथ', इंदुबाली - 'मेरी तीन मौते', मेहरून्निसा परवेज - 'शमा', अनीता कौल - 'चरागाहों के बाद', कैलाश नारद - 'एक बुत-शिकन', अवधनारायण सुनीता की 'पार्टनर' आदि रचनाएँ महत्त्वपूर्ण हैं। अन्य कहानिकारों में प्रेमकपूर, पानू खोलिया, अर्चना सिन्हा, सुरेश सिन्हा, हृदयेश, ओमप्रकाश निर्मल, कांता सिन्हा, काशीनाथ सिंह, मधुकर गंगाधर, ओमभारती, अरूण गोपाल उपाध्याय, सुंदर लोहिया, प्रयाग शुक्ल, सुरेंद्र पाल, रामनारायण शुक्ल, लबराज पंडित, कुंकुम जोशी आदि का समावेश है।

ज्ञानरंजन सातवें दशक के महत्त्वपूर्ण कहानीकार हैं। शशांक लिखते हैं - "ज्ञानरंजन की कहानियों का लेखन काल लगभग 1963 से 1973 के बीच की अवधि का है।"[4] अत: ज्ञानरंजन साठोत्तरी कहानीकार हैं।

सातवें दशक के कहानीकारों ने ओढ़ी हुई मानसिकता का प्रयोग नहीं किया। जीवन के कटु अनुभवों और आत्मपीड़न से भरे जीवन का यथार्थ चित्रण किया है। रघुवर दयाल वार्ष्णेय रघुवर दयाल कहते हैं - "समकालीन कहानी मनुष्य की आत्मपीड़न की प्रवृत्ति, यंत्रणा, सफटिंग की प्रवृत्ति, मृत्यु के प्रति एक नई

प्रतिक्रिया की प्रवृत्ति और सार्वदेशीय एवं अंतराष्ट्रीय प्रभावों के तत्त्वों से युक्त हैं जिसमें एक सक्रिय आदमी जीवित है जो लगातार निराशा और अकेलेपन से लड़ रहा है..... इस प्रकार समकालीन कहानीकार चुनौती की हर आशंका को भोगता है किंतु ऐसा पूर्व निर्धारित व्यवस्था के अंतर्गत नहीं होता। उसने तो बड़ी ही निर्ममता से उसे आरोपित यथार्थ के स्वरूप को तोड़ने का प्रयास किया है, जो पूर्ववर्ती कथाकारों को प्रिय रहा है। कथा की सभी धारणागत स्थितियाँ इन्हें अस्वीकार हैं।"[5] यहाँ स्पष्ट होता है कि सातवें दशक के कहानीकार उनके पूर्ववर्ती से अलग हैं।

सातवें दशक के कहानीकार जीवन की ओर सूक्ष्म दृष्टि ड़ालते हैं। इस कारण वे नई कहानीकारों से अलग दिखाई देते हैं। रघुवर दयाल वार्ष्णेय कहते हैं - "नई कहानी उनकी दृष्टि में भिन्न जीवन और जीवन दृष्टि की तस्वीर हैं। उनकी कहानियाँ मुद्राओं को उघाड़ने उनके छल-छद्म को और नकाब को उलटने में पूर्ण सफल हैं। उनमें तत्कालीन प्रामाणिकता से अधिक सार्थकता की तलाश है। इसीलिए कहानी का अंतीम लक्ष्य एक नई अर्थवत्ता प्रदान करता है अर्थात कहानी के मध्य हम जिन प्रतिक्रियाओं और प्रभाव-क्षणों में जी रहे होते हैं, समाप्त होते-होते बिल्कुल बदल जाते हैं और अनुभवों का एक ऐसा संसार खुलता है जो हमारा है, अपना है।"[6]

सातवें दशक के कहानीकारों का उद्देश्य न की कहानी कहना है और न समाज को उपदेश देना है बल्कि समाज का बदलता रूप और पारिवारिक संबंधों का बिखराव आदि को यथार्थ रूप से चित्रित करना था। रघुवर दयाल वार्ष्णेय कहते हैं - "सातवें दशक की कहानी का मूल उद्देश्य कहानी कहना नहीं, बदले हुए यथार्थ और संबंधों को संप्रेषित करना है। इसलिए उसमें चरित्र की अपेक्षा स्थितियाँ ही प्रमुख और महत्त्वपूर्ण हैं।"[7] कल्पना की उड़ान लगाकर पक्षियों की तरह आकाश में उड़ना उन्हें पसंद नहीं है। जीवन का जो सत्य है उसे अपने साहित्य का विषय बनाते हैं। उपेंद्रनाथ अश्क लिखते हैं - "इस दशक के कथाकार की दृष्टि न शिव पर उतनी है न सुन्दर पर, वह प्रमुखत: सत्य पर है।"[8] इस यथार्थता के कारण कभी-कभी उनपर आलोचक आरोप भी लगाते हैं कि इस दशक के अधिकतर कहनीकारों ने अकेलेपन का ही चित्रण अधिक किया है। इस गलतफहमी को दूर करने के लिए सातवें दशक के कहानीकार सुरेश सिन्हा कहते हैं - "जब हमारी कहानियों में अकेलापन या अजनबीपन की घुटन अभिव्यक्ति पाती है, तो वह एक रोमांटिक भंगिमा या फैशन नहीं है और न वह

सार्त्र, कामू या काफ्का के शब्दों के माध्यम से आता है। वरन् स्वयं हमारी अपनी जीवन पद्धति के प्रसूत सूक्ष्म से सूक्ष्मतर रेशों, विघटनकारी प्रवृत्तियों, राजनीतिक अव्यवस्था, आर्थिक पराजयों एवं स्वार्थपरक भ्रष्टाचार जनित परिस्थितियों तथा हनन करने एवं शासन की दुर्भावनाओं से उत्पन्न कारणों का परिणाम है।"[9] स्पष्ट है कि सातवें दशक के कहानीकारों ने जानबूझकर अकेलेपन का चित्रण नहीं किया वह तो उस परिवेश की देन थी।

आलोचकों द्वारा बहुत कहा गया है कि सातवें दशक के लगभग सभी कहानीकारों में समानता दिखाई देती है। उनके व्यंग्य और स्त्री-पुरूष संबंधों में छिछलापन है ऐसा भी कहा जाता है। लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय का मत द्रष्टव्य हैं - "सन् 1960 ई. के बाद की वर्षों में जो नई पीढ़ी उभरी है उसमें से भी कहानी लेखक तो ऐसे हैं जिनकी रचनाओं में विविधता, विस्तार और गहराई का अभाव दृष्टिगोचर होने लगा है और कथ्य रूप में एवं शिल्प, भाषा आदि की दृष्टि से उनमें एकरस्ता दिखाई देने लगी है। उनकी भाषा एक आयामी हो गई है, और यद्यपि उनमें आज के जीवन में व्याप्त, ढ़ोंग, ढ़कोसला, स्वार्थपरकता, यांत्रिकता, क्रमिकता, खोखलापन अमानवीयता, स्त्री-पुरूष संबंधों आदि पर व्यंग्य है, तो भी उनमें छिछलापन है ये कहानियाँ एकालाप शैली में लिखा हुआ गद्य काव्य मात्र दृष्टिगोचर होती है।"[10] इसमें और स्पष्टता के लिए सुरेश सिन्हा का वक्तव्य द्रष्टव्य है - "हर किसी की दृष्टि साफ और स्वस्थ ही नहीं है वरन् सूक्ष्म तर होते हुए उद्देश्य बिन्दु को पहचानने और सूक्ष्म प्रत्यक्ष हिट करने की क्षमता से भी पूरित है।"[11]

शिल्प की दृष्टि से इस दशक की कहानियों पर विचार करें तो उसमें नयापन दिखाई देता है। सरल भाषा-शैली है, सिर्फ सांकेतिकता, जटिलता उसमें नही है। खिंच-तानकर किसी प्रतीक का प्रयोग नहीं किया। सुरेश सिन्हा कहते हैं - "इस दशक के सभी समकालीन ने प्रयासहीन शिल्प का महत्त्वपूर्ण आदर्श स्थापित किया है। लादी गई सांकेतिकता, अमूर्त प्रतीक विधान, अस्पष्टता एवं दुर्बोधता के स्थान पर अब फार्म को सादगी, स्पष्टता और सार्थकता प्रदान करने के प्रति अधिक आग्रह है।"[12]

2.4. ज्ञानरंजन की कहानियों का सामान्य परिचय।

दिवा-स्वप्नी -

ज्ञानरंजन की प्रथम प्रकाशित कहानी है। कहानी में कथानायक युवक, डेजी कालगर्ल, मीरा

कथानायक की बचपन की दोस्त और मिसेज भट्टाचार्य नामक अड़तीस साल की विवाहित स्त्री आदि पात्र हैं।

कहानी में उन्नीस साल के युवक के मन की चंचलता, अस्थिरता, अकेलापन, प्रेमद्वंद्व, परंपरा और कॉल्गर्ल आदि का चित्रण है। कहानी में सिर्फ कथानायक इंदा के अंतरमन के विचार हैं। वह जीवन में आनेवाली हर स्त्री या लड़की को लेकर प्यार की दृष्टि से सोचता है। दिन-रात उसके सामने यही एक विचार रहता है। व्यर्थ विचार करना उसके स्वभाव का गुण है।

मीरा का विवाह हुआ है फिर भी वह अपने बचपन के दोस्त इंदो से प्यार करती है लेकिन मीरा सामाजिक परंपरा तोड़कर प्रेमी इंदो के साथ नहीं रह सकती। यहाँ प्रेम की द्वंद्व अवस्था दिखाई देती है। मिसेज भट्टाचार्य का पति दिन-रात अपने काम में रत रहता है इस कारण मिसेज भट्टाचार्य को अकेला रहना पड़ता है तो वह अकेलापन दूर करने के लिए इंदो के साथ दोस्ती करती है। कालगर्ल 'डेजी' का पेशा ही युवकों को अपनी चुंगुल में फसाकर उसके साथ प्यार का नाटक करना और पैसे हड़पना है। लेकिन इंदो इन सभी स्त्रियों के प्रति प्रेम की दृष्टि से देखता है।

हर पल सपनों की दुनिया में जीनेवाले युवकों के अंतर्मन में जो विचारों का चक्र चलता रहता है वही विचार कहानी में दिखाई देते हैं। कहानी की भाषा-शैली सरल और सुबोध है। यह कहानी प्रभावात्मकता की दृष्टि से सामान्य स्तर की कही जा सकती है।

कलह -

कहानी में मध्यवर्गीय परिवार का चित्रण है। कहानी में पात्र नायिका स्वाति, उसकी माँ और पिता हैं। कहानी में पारिवारिक संघर्ष, घुटन, तनावपूर्ण दांपत्य संबंध, पुरानी और नई पीढ़ी के विचारों में संघर्ष और सौत की समस्या आदि का यथार्थ चित्रण किया है।

स्वाति के माता-पिता के बीच संघर्ष है क्योंकि स्वाति के पिता, स्वाति की माँ घर में होते हुए भी दुसरी स्त्री घर में लाना चाहते हैं। स्वाति की माँ उनका खुलेआम विरोध नहीं कर सकती क्योंकि माँ को डर है कि समाज के सामने झगड़ा करने से अपनी प्रतिष्ठा कम हो जाएगी। इस कारण स्वाति के माता-पिता में हमेशा रात में झगड़ा होता है। स्वाति अपनी माँ को ही दोष देती है कि माँ ही पिता की गलतियों को आश्रय दे रही है।

लेकिन उसके ध्यान में यह नहीं आता कि समाज ने अभी तक स्त्रियों को इतनी स्वतंत्रता नहीं दी गई कि वह पुरूष की गलती को पकड़कर उसका खुलेआम विरोध कर सकें। स्वाति को परिवार में किसी का आधार नहीं है इस कारण वह राजे नामक युवक के साथ अपना नाता जोड़ती है और छुपके से उसे प्रेम पत्र भी लिख देती है। स्वाति परिवार को छोड़कर राजे के साथ जाना चाहती है लेकिन उसकी माँ पति का विरोध भी नहीं कर सकती। यहाँ माता-पुत्री के विचारों में खाई दिखाई देती है। इस कहानी विषय विश्वम्भरनाथ उपाध्याय लिखते हैं - ''इस कहानी में घरेलू उब का नक्शा है।''[13]

कहानी की भाषा-शैली सरल है। शब्द प्रयोग में सरलता एवं स्वाभाविकता हैं।

खलनायिका और बारूद के फूल -

कहानी का कथानायक 'मैं' स्वयं लेखक, सुमन कथानायक की प्रेमिका, वर्माजी सुमन के पिताजी हैं।

'बाह्यता' यह एक प्रेम कहानी लगती है लेकिन यह तो प्रेमहीनता की कहानी है। कहानी में प्रेम का बदलता रूप, प्रेम की विड़ंबना, व्यंग्य, व्यक्ति पर अर्थ की प्रधानता आदि का चित्रण हुआ है।

कहानी में कथानायक 'मैं' और सुमन की कॉलेज जीवन से प्रेम कहानी शुरू होकर इतनी आगे बढ़ गई की वे दोनों एक-दूसरे के बिना रह नहीं सकते थे। सुमन तो कहती थी - ''तुम्हारे बगैर मैं जिंदा नहीं रह सकती। मेरे पिता पता नहीं शादी करने को तैयार हो या न हो लेकिन मैं कहीं दूसरी जगह विवाह नहीं कर सकती अगर मैं मर गई तो मेरे दफन में जरूर शामिल होना।''[14] यहाँ लगता है कि सुमन कथानायक से प्रेम करती हैं लेकिन वही सुमन आगे चलकर विवाह तय होने के बाद लिखती है - ''मैं जीवन से हार गई हूँ। शादी अगले महीने के लिए तय हो गई है।''[15] वह चाहती तो कथानायक को अपना विवाह तय होने के पहले बता सकती थी। पहले पत्र में 'मैं' को चुपचाप बैठने को कहती है। यहाँ स्पष्ट है कि वह यह जानती थी कि कथानक को पता चलेगा तो वह दूसरे के साथ शादी करने से रोक सकता था। इस कारण सुमन उसे चुपचाप बैठने को कहती है और अंतिम पत्र में बता देती है वह भी शादी के एक मास पहले, शादी तय होने से पहले नहीं लिखा मतलब वह नायक के साथ शादी करने के लिए तैयार नहीं थी।

यहाँ और एक बात ध्यान में आ जाती है कि सुमन न अपने पिता के आगे जा सकती और न समाज की परंपरा को तोड़ सकती है। वह खूद प्रेम करती है लेकिन अपनी छोटी बहन सरोज का प्यार करना बर्दाश्त नहीं कर सकती। कथानायक से अपने प्रेमपत्र वापस माँगती है क्योंकि उसे डर है कि कथानायक आगे चलकर उसे ब्लैकमेल कर सकता है। सुमन कथानायक के साथ सिर्फ वक्त काटने के लिए प्यार करती थी। साधनहीन कथानायक के गले में पड़ने की बजाय दूसरे से विवाह करती है। जब तक कॉलेज जीवन था तो प्रेम की बड़ी-बड़ी व्याख्याएँ करनेवाली सुमन अंत में बदल जाती है। वह इतनी चालाक लड़की है कि कथानायक नाराज न हो इस कारण उसे अपने पिता के लिए ऐसी कहानी लिखने के लिए कहती है जिससे उसकी छोटी बहन सरोज रोएगी और उसे वह शादी का तोहफा समझेंगी।

कहानी भाषा की दृष्टि से सशक्त है। प्रेम की पारंपारिक कहानी से अलग लगती है।

आत्महत्या -

'आत्महत्या' ज्ञानरंजन की अब तक की सभी कहानियों में सबसे छोटी कहनी है। कहानी का कथानायक स्वयं लेखक 'मैं' के रूप में हैं। कहानी के द्वारा कहानीकार ने कायर व्यक्ति की उस विद्रुपता को दिखाने का प्रयास किया है जो असफल होने पर आत्महत्या करने की सोचता है। यह विद्रुपता तथा कायरता व्यक्ति के अंदर ही होती है।

कथानायक आत्महत्या करना चाहता है लेकिन कर नहीं सकता क्योंकि वह अपने आप को असाधारण समझता है। आत्महत्या का विचार मन में आने का कारण यह है कि वह असफल प्रेमी, कैन्सर ग्रस्त और समाज से ठुकरा दिया है। वह आत्महत्या करना चाहता है लेकिन उसके अंदर जो जीने की लालसा है वह उसे मरने नहीं देती। वह उसे कागज पर लिख देता जिससे मन को शांति मिल जाती है। कहानी के द्वारा कहानीकार एक शाश्वत सत्य बताता है कि मनुष्य मरना नहीं चाहता। चाहे कैसा ही क्यों न हो वह हमेशा जीना चाहता है। इस कहानी के विषय में विश्वम्भरनाथ उपाध्याय कहते हैं - ''यह कहानी कायर व्यक्ति के मन का मजाक है।''[16] कहानी में दूसरा पात्र नहीं है। आत्मकथात्मक शैली में लिखी कहानी है।

सीमाएँ -

कथानायक 'मैं' के रूप में स्वयं लेखक, जो पढ़ाई के लिए दूसरे शहर से इस शहर आया है। विवेक उसी शहर का निवासी है। विवेक के घर में उसकी छोटी बहन सविता, बड़ी बहन और जीजा जी तथा माता-पिता हैं।

कहानी उपरी तौर से नायक 'मैं' और सविता के प्रेम की लगती है लेकिन वास्तव में कहानीकार उस दोमुँहवाले लोगों के उपर वार करना चाहता है जो खुद प्रेम करते हैं, प्रेम की बड़ी-बड़ी सुंदर व्याख्याएँ भी करते हैं किंतु वही अपनी बहन का किसी के साथ प्यार करना बर्दाश्त नहीं कर सकते, ऐसे लोग सिर्फ उपरी दिखावे के लिए प्रेम को विशाल बनाते हैं वास्तव में उनका प्रेम विषयक दृष्टिकोण तो बहुत सीमित होता है।

कथानायक 'मैं' विवेक का घनिष्ठ दोस्त है। उसका विवेक के घरवालों से भी परिचय है। कथानायक 'मैं' और विवेक की छोटी बहन सविता चोरी चुपके से एक-दूसरे से प्यार करने लगते हैं। एक दिन विवेक को यह पता चल जाता है तो विवेक कथानायक 'मैं' को गालियाँ देता है। यही विवेक प्रथमत: जब प्रमिला नामक लड़की से प्यार करता था तो कहता था कि प्रेम में बाधा ड़ालना अच्छा नहीं होता। इतना ही नहीं प्रेम सफल हो इसलिए कथानायक 'मैं' और सविता की मदद भी लेता है। यही विवेक अपनी बहन सविता और दोस्त कथानायक के प्रेम को मान्यता नहीं देता। यहाँ उसका प्रेम विषयक सीमित दृष्टिकोण दिखाई देता है। कहानी ऐसे ही दो मुँहवाले व्यक्तियों पर प्रहार करती है जीनके खाने के दात और दिखाने के दात अलग होते हैं। पुरूष स्त्री संबंधों को सहज स्वीकार करनेवाला 'मैं' जब उसकी बहन सविता से विवेक संबंध जोड़ना चाहता है तब अहंम् को ठेस पहुँचती है। इस तरह से प्रेम की संकल्पना को लेकर अपने बारे में एक विचार होता है, तो अपनी सगी बहन के संबंध में प्रेम संबंधी विचार संकुचित हो जाते हैं। इस मार्मिक प्रेम सिद्धांत को 'सीमाएँ' कहानी अभिव्यंजित करती है।

कहानी की भाषा-शैली सशक्त है। कहानी व्यंग्यात्मक है।

फेंस के इधर और उधर -

यह बहुत प्रसिद्ध कहानी है। कहानी में पात्र कथानायक स्वयं लेखक 'मैं' के रूप में उसकी

छोटी बहन पप्पी और माता-पिता, पड़ोसिन की लड़की और उसके माता-पिता आदि पात्र हैं।

कहानी में दो परिवारों की तुलना की है। कहानी के द्वारा कहानीकार यह बताना चाहते हैं कि जिस परिवार में पुराने आचार-विचार हो, स्त्रियों को बंधन में रखा जाता हो, उनकी ओर हमेशा शंका की दृष्टि से देखा जाता हो तो उस परिवार में व्यर्थ ही तनाव निर्माण हो जाता है और परिवार की प्रगति नहीं हो सकती है। जो परिवार खुले दिल से फेंस के उधर रहने वाले परिवार के साथ स्नेह संबंध रखते हैं उनमें खुशियाँ बनी रहती है।

फेंस के इधर का परिवार पुरानी विचारधारा का है और फेंस के उधर का परिवार नई विचारधारा का है। फेंस के इधर का परिवार कथानायक 'मैं' का है जहाँ पुराने आचार और विचार हैं और फेंस के उधर का परिवार उस लड़की का है जहाँ नए विचार हैं। कहानी में परंपरागत विचार और मध्यवर्गीय संस्कार के साथ नए विचारों की तुलना करने का प्रयास किया है। कथानायक की बहन और भाभी पूजा के लिए फूल लाने भी अकेली नहीं जा सकती लेकिन फेंस के उधर के परिवार की लड़की अकेली बाहर घूमती है, उसे कोई ड़र नहीं है। फेंस के इधर के परिवार की धारणाएँ ऐसी है कि शादी के समय पड़ोसियों को बुलाना ही चाहिए, बिदाई के समय लड़की को रोना ही चाहिए, शादी के वक्त मंडप, खानपान, धूमधाम होनी ही चाहिए। लेकिन फेंस के उधर के परिवार में इसमें से एक भी शर्त मंजूर नहीं है। कहानी में इस दो अलग विचारधारा के परिवारों की तुलना करके दोनों के बीच विचारों की खाई को दिखाने का प्रयास किया है।

शेष होते हुए -

कहानी में पारिवारिक विघटन का चित्रण है। कहानी में पात्र कथानायक मझला, उसके माता-पिता, छोटी बहन तारा और बड़ाभाई तथा भाभी आदि पात्र हैं।

कहानी में पारिवारिक विघटन, घुटन, संत्रास, तनाव, अजनबीपन और परायपन आदि का यथार्थ चित्रण है।

मझला शहर में नौकरी करता है। वह अपने परिवार से अलग होता जा रहा है। मझले के घर का हर एक सदस्य सिर्फ अपना ही सोच रहा है। अपने-अपने कमरे सजा रहे हैं और माता-पिता की ओर कोई ध्यान नहीं देता। उनका कमरा कबाड़खाना बनाया गया है हर नई चीज परिवार के अन्य सदस्य आपस में बाँट

लेते हैं और पुरानी चीजें माता-पिता के कमरे में रख देते हैं। तारा हमेशा माँ के पुराने विचारों को लेकर अपमानित करती है। अब मझले का घर आना किसी को अच्छा नहीं लगता। मझले की छुट्टियाँ समाप्त होने पर घर के सदस्य उसके जाने का इंतजार करते रहते हैं। परिवार के सभी सदस्य शरीर से एक जगह हैं, मन से नहीं। मझले के घर में इतने संबंधी होने के बावजूद भी वह अजनबी होता जा रहा है। मझले के माता-पिता में हमेशा अंतर्गत संघर्ष रहता है। इन दोनों की स्थिति ऐसी हो गई है कि न बड़े बेटे को ठुकरा सकते हैं न छोटे बेटे को पास ले सकते हैं। मझले के विवाह को लेकर माँ हमेशा चिंतित रहती है। भाई-भाई के बीच संघर्ष है। बड़ा भाई पैसों के कारण मझले को गालियाँ बकता है।

कहानी में आत्मतीय संभाषण है। मुहावरे, अँग्रेजी शब्दों का कहीं जगह प्रयोग दिखाई देता है।

पिता -

'पिता' ज्ञानरंजन की सबसे प्रसिद्ध कहानी है। कहानी में कथानायक 'वह', कथानायक का बड़ा भाई सुधीर और भाभी तथा छोटी बहन आदि पात्र हैं। कहानी में पुराने पीढ़ियों के विचारों और नई पीढ़ेयों के विचारों में संघर्ष है। कहानी में पिता पुरानी विचाराधारा के प्रतीक हैं और कथानायक नई विचारधारा के प्रतिक है। 'पिता' कहानी के पिता केवल कथानायक के पिता नहीं हैं वे उन तमाम भारतीय 'पिता' के प्रतीक हैं, जो अपने पुराने आचार-विचार को छोड़ने को तैयार नहीं है और नए आचार-विचार को स्वीकार करने की हिम्मत उनमें नहीं है।

कहानी में पिता-पुत्र के बीच आचार-विचार, खान-पान, रहन-सहन आदि को लेकर हमेशा संघर्ष चलता है। ज्ञानरंजन की 'पिता' कहानी के पिता और उषा प्रियवंदा की कहानी 'वापसी' के पिता में अंतर दिखाई देता है। 'वापसी' कहानी के पिता को परिवार में गौण स्थान है लेकिन ज्ञानरंजन की 'पिता' कहानी में पिता के प्रति उनकी संतानों में डरयुक्त आदर-भाव है। 'वापसी' में परिवार के सदस्यों द्वारा पिता को घर से बाहर निकालने के लिए मजबूर किया जाता है लेकिन ज्ञानरंजन की 'पिता' कहानी के पिता के प्रति परिवार के सदस्य द्वारा कभी भी ऐसा व्यवहार किया हुआ नहीं दिखाई देते।

'पिता' कहानी के कथानायक का वैशिष्ट्य यह है कि वह पिता के विचारों से संघर्ष करता है लेकिन उनके विचारों का विरोध नहीं करता। पुत्रों के द्वारा घर में नई चीजें लाने पर पिता को कभी उत्साह नहीं होता। पुत्रों द्वारा पिता का विरोध है लेकिन वे हमेशा पिता से जुड़े रहने का प्रयास करते हैं। विश्वम्भरनाथ उपाध्याय कहानी के विषय में कहते हैं - '' 'पिता' कहानी में पीढ़ियों का झगड़ा है।''[17] कहानी में दो पीढ़ियों के विचारों में खाई है, संबंधों में तनाव है।

कहानी की भाषा-शैली प्रभावकारी है।

एक नमूना सार्थक दिन -

कहानी में कथानक का अभाव है। कहानी के द्वारा कहानीकार मनुष्य की उस प्रदर्शनप्रियता की ओर उँगली निर्देशित करता है, जो हर समय अपने-आप को सबसे अलग दिखाने का प्रयास करते हैं। मनुष्य की दैनिक विदुषकी स्थितियों, हरकतों और मुद्राओं की अनगिनत सूक्ष्मता का चित्रण कहानी में किया है। विश्वम्भरनाथ उपाध्याय इस कहानी के विषय में कहते हैं - ''इस कहानी में ऊब है और कहानी साधारण है।''[18]

कहानी का नायक 'वह' हमेशा अपने-आप को सबसे अलग दिखाने का प्रयास करता है, जो बड़ा ही हास्यास्पद लगता है। कभी व्यर्थ ही में किसी पर टूट पड़ता है, तो कभी दुकान से सबसे महँगी चीजें ले आता है। अश्लील मासिक पत्रिका पढ़ना, शनील का गाउन पहनना, सीगार पीना, दोस्तों में बैठकर रोमांचकारी गप्पे लगाना, व्यर्थ ही किसी लड़की की निंदा करना आदि हरकते वह हमेशा करता रहता है इससे ध्यान में आ जाता है कि वह यह सब सिर्फ लोगों को दिखाने के लिए ही करता है। अतुल्वीर अरोड़ा कहती है कि यह कहानी ''नकाबपोशी, झूठ और बदकारी जीते हुए आदमी की स्थिति पर व्यंग्य करती है।''[19]

कहानी में श्रृंखला नहीं है। कहानी व्यंग्यात्मक है।

दिलचस्पी -

कहानी में कथानायक मुकुल, उसकी छोटी बहन नमिता तथा जीजी और माँ, पड़ोसी श्रीमती जोशी, श्रीयुत जोशी और उनकी एकलौती पुत्री वंदना आदि पात्र हैं। कहानी के द्वारा कहानीकार यह बताना चाहते हैं कि आज के युग में लड़कियाँ आधुनिकता की ओर आकर्षित हैं लेकिन पूर्णत: आधुनिकता उनमें नहीं

है। बहुत-सी लड़कियाँ अपनी आधुनिकता प्रमाणित करने के लिए अपनी बातचीत के लहजे को बेवाफ बनाने का फूहड़ प्रयास करती हैं इस पर कहानीकार व्यंग्य करता है। मध्यवर्गीय परिवार का व्यक्ति जब नौकरी करता है तो उसके आगे पीछे सिर्फ परिवारवाले ही नहीं तो पड़ोसी भी करते हैं।

कहानी में कथानायक मुकुल की प्रशंसा परिवार के सदस्यों के साथ पड़ोसी भी करते हैं। नायक की जीजी, छोटी बहन नमिता और पड़ोसिन श्रीमती जोशी उनकी पुत्री वंदना व्यर्थ ही मुकुल की प्रशंसा करते रहती है। वंदना हमेशा कहती है कि आप कितने भाग्यशाली हैं कि आपको पहाड़ पर नौकरी मिल गई है। कॉलेज जाते समय रास्तें में ही अपनी सहेली के घर में अपने कपड़े बदलना, जान बूझकर जीजी का पड़ोसियों को ओल्ड फॅशन्ड कहना, वंदना और नमिता के द्वारा कथानायक को वेस्टर्न म्यूझिक सुनवाना, स्केटिंग के बारे में, शेक के और स्लैक्स के बारें में पूछना आदि सिर्फ उपरी दिखावे के लिए ही करती है। इन सभी बातों में कथानायक को दिलचस्पी नहीं है। कहानी के विषय में यदुनाथ सिंह कहते हैं - '' 'दिलचस्पी' की लड़कियाँ अब सिर्फ इतनी एडवांस हो गई हैं कि हिल्स्टेशन के रोमांस को मानसिक स्तर पर भोग सकती हैं, अपने आप को आधुनिक प्रमाणित करने के लिए अपनी बातचीत के लहजे को बेबाक बनाने की फूहड़ कोशिश कर सकती हैं, पाश्चात्य नृत्य सीखने और चुस्त पोशाक पहनने की कल्पना का सुख ले सकती हैं और अपनी शादी की बाते सबके सामने बैठी सुनती रहती हैं भाइयों के सामने कूल्हे मटका सकती हैं। कहानी की लड़कियों की यह अधकचरी आधुनिकता शिल्पगत पुच्छन्न व्यंग्य के साथ-साथ दृष्टा नायक के क्षोभ की क्रमशः बढ़ती गहराई के साथ-साथ नंगी होती है।''[20] यहाँ यह बात ध्यान देने लायक है कि आधुनिकता का झूठा आवरण लेना कभी-कभी कितना हास्यस्पद होता है।

कहानी की भाषा-शैली बड़ी सशक्त है।

छलांग -

कहानी में कथानायक 'मैं' के रूप में स्वयं लेखक, पड़ोसी श्रीमती ज्वेल तथा श्रीयुत ज्वेल और उनकी विक्टर और आशा नामक बेटा और बेटी आदि पात्र हैं।

कहानी में कहानीकार ऐसे लड़के के मन: स्थिति का चित्रण करता है जो अपनी उम्र से अधिक उम्र की स्त्री के साथ प्रेम करने का प्रयास करता है। यहाँ तक की उसके साथ शरीर संबंध रखने का प्रयत्न करता है और आगे चलकर उस स्त्री द्वारा उसे बच्चा समझाने पर नाराज हो जाता है। कहानी के द्वारा कहानीकार उसी विद्रुपता को दिखाने का प्रयास करता है।

कहानी में कथानायक 'मैं' अपनी पड़ोसिन श्रीमती ज्वेल से परिचित हैं। श्रीमती ज्वेल का पति श्रीयुत ज्वेल अपनी पत्नी में दिलचस्पी नहीं लेता क्योंकि वह हमेशा काम में रत रहता है। इसी कारण श्रीमती ज्वेल अपना अकेलापन दूर करने के लिए कथानायक के साथ अपना समय बीताने का प्रयास करती है। कभी-कभी श्रीमती ज्वेल के मन में भी काम भावना आती है इसी कारण वह नायक को अपने शरीर को स्पर्श करने देती है उसी समय नायक भी वही चाहता है लेकिन दोनों में इतनी हिम्मत नहीं थी कि शरीरसंबंध रखें। हर वक्त श्रीमती ज्वेल कोई अलग बहाना बनाकर नायक से अपना छुटकारा पाती है। यहाँ एक बात ध्यान में आती है कि श्रीयुत जोशी की उम्र श्रीमती जोशी की उम्र से अधिक है इस कारण भी श्रीमती जोशी युवा नायक के प्रति आकर्षित होती है। यहाँ अनमेल विवाह के कारण यौन कुंठा दिखाई देती है। नायक का अपनी काम भावना पर काबू नहीं, उसे दबाया नहीं इस कारण विकृति निर्माण हो गई है। इस कहानी के विषय में यशपाल वैद्य कहते हैं - "इस कहानी में युवावस्था की उस दमित सेक्स की मांग का चित्रण है जिसे यदि दबाया न जाए तो सोच और विचार-विमर्श के स्तर पर तो यह दमित इच्छा एक ग्रंथि बनकर किसी नारी या पुरूष को भी भोगने पर उतारू हो सकती है। मनोवैज्ञानिक यथार्थ का प्रकृत रूप कहानी में है। श्रीमती ज्वेल और नायक के संबंध में काम यौन क्रियाओं की गुदगुदी है - कहानी में कुरूपता, वीभत्सता और शारीरिकता, मांसलता सब कुछ है, लेकिन कहानी अश्लीलता का प्रभाव नहीं छोड़ती।"[21]

पाठकों पर कहानी सहज स्वाभाविक प्रभाव अंकित करती है। अश्लील शब्द और वाक्यों का प्रयोग हुआ है लेकिन वह सिर्फ मनुष्य के अंदर की विकृतियों को स्पष्ट करने के लिए न कि पाठक के मन में अश्लील भाव पैदा करने के लिए।

13620

संबंध -

कहानी आत्मकथात्मक शैली में लिखी है। कहानी में कथानायक 'मैं' के रूप में स्वंय लेखक, उनके माता-पिता और छोटा भाई आदि पात्र हैं।

कहानी में संयुक्त परिवार का चित्रण किया है। कहानी में पारिवारिक संबंध, आर्थिक समस्या, बेरोजगारी की समस्या, अजनबीपन आदि का यथार्थ चित्रण मिलता है। इस कहानी के द्वारा कहानीकार यह बताना चाहते हैं कि आज के आधुनिक युग में व्यक्ति-व्यक्ति से दूर जा रहा है। उसे हर वक्त परिस्थितियों के सामने झुकना पड़ता है। इन विषम परिस्थितियों के कारण कथानायक अपने परिवार के सदस्यों में अजनबी होता जा रहा है। जिस माँ ने जन्म दिया वह माँ भी पुत्र को कभी-कभी माँ लग रही है।

कथानायक का छोटा भाई आत्महत्या करने के लिए गया है फिर भी बड़ा भाई शांत है यहाँ बड़े भाई की स्वार्थी वृत्ति दिखाई देती है। लेकिन वह वैसा नहीं है। सचाई तो यह है कि छोटे भाई के जीवन के 25 साल गुजरे फिर भी उसे कहीं नौकरी नहीं मिली और पाँच साल से दर-दर के ठोकरे खाकर असफल हो गया है। कथानायक अपने छोटे भाई से प्यार करता है लेकिन आज उसकी परेशानियाँ देखकर उसे दु:ख हो रहा है और इस कारण उसका पराजय के साथ जीवन जीने के बजाय मरना ही ठीक समझ रहा है। यदुनाथ सिंह की इस कहानी के बारे में टिप्पणी है - "यह समज, संघर्ष की रूमानी कल्पना में डूबे हुए सुखी निश्चिंत लोगों के लिए या जीवन-विवेक से शून्य जड़ लोगों के लिए कायरतापूर्ण लग सकती है लेकिन दारूण स्थितियों के बीच अमानवीय जीवन जीनेवाले के लिए यह बहुत बड़े साहस और ईमानदारी की चीज है।"[22]

कहानी की भाषा-शैली सशक्त और कहानी रोचक है। कहानी लंबी है लेकिन हर वक्त आगे क्या होगा यह कौतुहल बना रहता है।

अमरूद का पेड़ -

कहानी आत्मकथात्मक शैली में लिखी है। कहानी में कथानायक 'मैं' के रूप में स्वयं लेखक, पिता, छोटा भाई मिदु, पप्पु, चुन्नु, पड़ोसिन बाबू कन्हैयालाल की बूढ़ी पत्नी, माली आदि पात्र हैं। कहानी में

अंधश्रद्धा की समस्या को उठाया है। अंधश्रद्धा को मानकर चलनेवाली पुरानी पीढ़ी नई पीढ़ी के विकास में बाँध बनती है इसका यथार्थ चित्रण कहानी में किया है।

कथानायक के घर के सामने एक अमरूद का पेड़ आया था जो आगे चलकर फूलता-फलता भी है लेकिन बाबू कन्हैयालाल की बूढ़ी पत्नी के द्वारा उसे अशुभ समझे जाने के कारण परिवार के प्रौढ व्यक्तियों ने उसे काट ड़ाला। कथानायक तो उस पेड़ से प्रगति की चेतना लेता था। उधर नायक की माँ परिवार के सभी दुष्परिणाम - बहु की अलगाव भावना, सबसे छोटे का निठल्लापन, खूद की अपनी बीमारी और परिवार के सदस्यों का धंधे से बिखर जाना और कुछ नहीं है बहुत दिनों तक दरवाजे पर उसी अमरूद के पेड़ का लगे रहना मानती है। माँ की यह खुली अंधश्रद्धा है। कहानी में पारिवारिक विघटन का भी चित्रण दिखाई देता है। विश्वम्भरनाथ उपाध्याय इस कहानी के बारे में कहते हैं - '' 'अमरूद के पेड़' में पुरानी पीढ़ी (माँ) के अंधविश्वास का चित्रवत है। यहाँ मुकाबला बद्धमूल संस्कार और आधुनिक बुद्धिवाद में है।''[23]

कहानी में पारिवारिक जीवन अंधश्रद्धा आदि का भी चित्रण हुआ है। अमरूद का पेड़ यहाँ प्रतीक है, माता के द्वारा अंधश्रद्धा मानी जाती है, जो अपनी संतान के विकास में बाधा है। परिवार के सभी दुष्परिणाम पेड़ के कारण ही निर्माण हुए हैं ऐसा मानना गलत है। अमरूद का पेड़ घर के सामने न होता तो क्या परिवार में बहू में अलगाव भावना, माँ की खूद की अपनी बीमारी नहीं आती यह संभव नहीं है। कहानी में पुरानी पीढ़ी अंधश्रद्धा को मानकर चलती है, इस कारण नई पीढ़ी को उनके साथ संघर्ष करना पड़ता है। वैसे तो पुरानी पीढ़ी हमेशा नई पीढ़ी का भला ही चाहती है सिर्फ विचारों में दूरी होती है।

कहानी की भाषा अत्यंत सरल है। कहानी प्रतिकात्मक है।

चुप्पियाँ -

यह एक प्रेम कहानी है। चुप्पियाँ कहानी ऐसे युवक की है जो मध्यवर्गीय परिवार में पला है किंतु शहर में नौकरी करता है तो वहाँ वह न शहरी संस्कार ग्रहण कर सकता है न गाँव के संस्कार को स्वीकार कर पाता है। साथ ही एक यतीम युवा लड़की भी है जो नायक से प्रेम तो करती है लेकिन आखिर तक उसे खुले दिल से बोल नहीं पाती है।

कथानायक करन अपनी फूफा-फूफी के घर छुट्टियाँ बिताने जाता है, तो वहाँ मिन्नो से भेंट होती है जो एक यतीम लड़की है किंतु करन के फूफा-फूफी ने ही उसे पाल-पोसकर बड़ा किया है। उसी समय वह दोनों एक-दूसरे से प्यार करने लगे थे। करन गाँव से शहर में आया है फिर भी अपने गाँव के संस्कार नहीं छोड़ता। उसमें इतनी हिम्मत नहीं की वह खुले दिल से अपनी फूफा-फूफी के घर में मिन्नो से प्यार की बातें करे और मिन्नो तो अनाथ है उसे अपने फूफा-फूफी का ड़र है। दोनों एक-दूसरे से प्यार तो करते हैं लेकिन अंत तक नहीं बोल पाते। दोनों के विचार में कमजोरी दिखाई देती है। उन्हें समाज और परिवार का ड़र है। यह एक असफल प्रेमियों की कहानी है जो अपने संस्कार या रूढ़ियों को तोड़कर आगे नहीं जा सकते। कहानी में मन की बातों का जिक्र अधिक है

कहानी सरल और सुबोध है।

याद और याद -

यह आत्मकथात्मक शैली में लिखी कहानी है। कहानी में कथानायक अपने भूतकालीन जीवन और वर्तमान जीवन की तुलना करता है। अधिक तर भूतकालीन जीवन का ही चित्रण दिखाई देता है। भूतकालीन जीवन में माँ की मृत्यु और शकुन नामक युवती के साथ की गई प्रेमलीलाएँ महत्त्वपूर्ण हैं। आज उसके जीवन में "फूटी बावडियाँ है, जो उजड़ी दरगाह की तरह ध्वस्त हैं। चारों तरफ जंगल, टालें, खदान, कोयला तथा शुष्क लैण्डस्केप हैं। इन में पस्ती है घुटन है, कटाव और हवादिस भरी जर्द दोपहर-सी जिंदगी है। एक संबंधहीन दूरी है।"[24] आज के जीवन के कई गुणा अधिक सुखी उसका भूतकालीन जीवन होगा।

यह कहानी ऐसे व्यक्ति की है जो अपने परिवार को छोड़कर नौकरी के लिए किसी दूर प्रदेश में खदान कामगार बन गया है। संपूर्ण कहानी में कहानीकार ने उस व्यक्ति के सुखी और दु:खी जीवन का जायजा लिया है।

फ्लैश-बैक शैली में कहानी की संरचना हुई है।

मनहूस बँगला (1960) -

ज्ञानरंजन की यह प्रथम प्रकाशित कहानी है। कहानी प्रथम पुरूष में लिखी है। कहानी में

कथानायक 'मैं' के रूप में स्वयं लेखक, तारा कथानायक की पत्नी आदि पात्र हैं। कहानी में संयुक्त परिवार का चित्रण है। कहानी के द्वारा कहानीकार यह बताना चाहता है कि संयुक्त परिवार में सिर्फ दाल-रोटी के लिए ही झगड़ा नहीं होता, वरन् सभ्यता के उपकरणों की अंगीकृति और स्वीकृति की बहुत सारी समस्याएँ होती हैं। संयुक्त परिवार में एक मुख्य व्यक्ति के हातों में सब कुछ होता है उसका परिवार के अन्य सभी सदस्यों पर एक प्रकार का दबाव रहता है लेकिन परिवार विघटित हो जाने पर वह दबाव नहीं रहता और मुख्य व्यक्ति अकेला पड़ जाता है।

कहानी का कथानायक स्वास्थ लाभ के लिए दार्जिलिंग जाता है और वहाँ एक पुराने बँगले में रहनेवाले संयुक्त परिवार के बारे में सोचता है, जिस तरह कुछ अत्यधिक कल्पनाशील व्यक्ति अपरिचित एवं अज्ञात वस्तुओं के बारे में सोचते हुए मधुर और रोमानी स्वप्न जाल बुनते हैं। इन सपनों को पूर्णता देने के लिए उसे एक भोली-सी युवती भी उसी बँगले में दिखाई देती है। कथानायक एक साल में दो बार दार्जिलिंग जाता है। पहले वह उस संयुक्त परिवार के बारे में सोचता था कि इस परिवार में सिर्फ दाल-रोटी के लिए ही झगड़ा नहीं होगा वरन् अपनी स्वतंत्रता और साधन-सुविधा के लिए भी होगा यही सोचना आगे जाकर सच होता है। दो साल बाद उसे मालूम हो जाता है कि उस बँगले में जो संयुक्त परिवार था अब वह बिखर गया है। परिवार का मुखिया बाबु कन्हैयालाल की मृत्यु हो गई है और उसकी पुत्री घर के नौकर के साथ किसी शहर में भाग गई है। दो बेटे अपनी पत्नियों को लेकर घर से बाहर गए हैं और बाबू कन्हैयालाल की बूढ़ी पत्नी उसी मनहूस बंगले में अकेली जीवन ढो रही है। जब तक रायबहादुर जीवित थे तो परिवार इकठ्ठा था, उसके मृत्यु के उपरांत परिवार विघटित हो गया है। यहाँ परिवार के सदस्यों की स्वतंत्रता और उस पर मुख्य व्यक्ति का दबाव नष्ट होने पर परिवार का विघटन दिखाई देता है।

कहानी में पारिवारिक विघटन, घुटन, सुप्त संघर्ष, स्त्री स्वतंत्रता की समस्या आदि का चित्रण हुआ है। कहानी सिनेमा की तरह लगती है। उदास वातावरण, सुनसान सड़कें, दार्जिलिंग की प्रकृति का चित्रण बड़े सुंदर ढ़ंग से किया है।

कहानी की भाषा-शैली सरल और सुबोध है।

गोपनीयता -

कहानी में कथानायक हर्ष, छोटा भाई पाशा और बहन सोनी तथा माता-पिता और पहले माँ की कुंदा जीजी पात्र हैं।

कहानी में संयुक्त परिवार का चित्रण हुआ है। कहानी के द्वारा कहानीकार यह दिखाना चाहते हैं कि परिवार में बच्चों से जितनी बाते गुप्त रखी जाती हैं उतनी उनकी उसे जानने की इच्छा बढ़ती है। यह छुपाना भी कभी-कभी कितना धोकादायक होता है इसका यहाँ चित्रण किया है। बच्चों से बाते गुप्त रखी जानी जरूरी भी हैं किंतु उसकी कोई मर्यादा होनी चाहिए। कहानी में एक मध्यवर्गीय संयुक्त परिवार में गर्भपात की घटना बच्चों से छुपाई जाती है पर आगे चलकर परिवारवालों को कितनी समस्याओं का सामना करना पड़ता है इसका पूरी कहानी में चित्रण हुआ है।

कथानायक 'मैं' के परिवार में गर्भपात की घटना घटित हुई है यह सिर्फ परिवार के बड़े सदस्य ही जानते हैं। बड़े सदस्यों के द्वारा यह बात बच्चों से दूर रखी जाती है, लेकिन कथानायक और पाशा इतना तो समझ गए हैं कि परिवार में कैसी तो दुर्घटना हुई है। वह दोनों और जानने की कोशिश भी करते हैं लेकिन बड़ों द्वारा झूठी तसल्ली दी जाती है कि कुंदा जीजी का कलकत्ता में ॲक्सडेन्ट हो गया है। एक दिन पाशा को रहा नहीं जाता तो कुंदा जीजी से ही साहस करके पूछ लेता है तो पिताजी दो तमाचे लगा देते हैं, तो पाशा रोते-रोते उस रहस्य को परिवार के सभी के सामने खोल देता है कि न जीजी का ॲक्सडेन्ट हुआ है न जीजी बीमार है वह तो अपने पेट का किड़ा गिरवाने कलकत्ता गई थी। यह सब उसे नौकरानी से पता चला था। फिर एक बार परिवार में निराशा जनक वातावरण निर्माण होता है।

यहाँ कहानीकार यह कहना चाहत है कि मध्यवर्गीय परिवार में एक गर्भपात की घटना परिवार में कितनी समस्याएँ उत्पन्न कर देती हैं। परिवार के बड़े सदस्यों को डर है कि यह बच्चों को मालूम पड़े तो सारे समाज में कर देंगे और अपनी प्रतिष्ठा खराब होगी क्योंकि शादी से पहले ही कुंदा गर्भवती रह चुकी थी। पर वे बच्चे क्या जाने की कुंदा जीजी की अब तक शादी नहीं हुई और शादी के पहले बच्चा होना समाज में अप्रतिष्ठा होती है। बच्चे तो ऐसा सोचते हैं कि हमारी माँ हर दिन ईश्वर की प्रार्थना करती है लेकिन फिर भी हमारे

दादा-दादी, ताउ-ताई, माता-पिता हम से दूर क्यों हैं। इतनी-सी समझवाले बच्चे क्या समझेंगे प्रतिष्ठा क्या होती है।

कहानी की भाषा-शैली सरल है। कहानी का संबंध बच्चों के साथ अधिक है।

क्षणजीवी -

कहानी में कथानायक 'मैं' के रूप में स्वयं लेखक, छोटी बहन रानी, पड़ोसन की लड़की शांती आदि पात्र हैं। कहानी में आर्थिक समस्या, पिता-पुत्र संबंध में तनाव आदि का प्रखरता से चित्रण दिखाई देता है।

कथानायक चार दिन से पिताजी द्वारा भेजी गयी 30 रूपये की मनिऑर्डर का इंतजार करता है। उसी बीच उसे कितनी समस्याओं का सामना करना पड़ता है इसका भी चित्रण हुआ है। कथानायक 'मैं' ऐसे युवकों का प्रतीक है जो अपने पास पैसा न हो तो अपना अपमान समझते है और व्यर्थ ही किसी दूसरे के साथ अपनी तुलना करते हैं और सोचते हैं मैं ऐसा न करूँगा तो दूसरे को बुरा लगेगा, या मेरा अपमान हो जायेगा। वास्तव में इसका उनके साथ कोई ताल्लूक नहीं होता। अपने दोस्तों के द्वारा रिश्वत लेना उन्हें पसंद आता नहीं यह सभी गुण इस कहानी के नायक में भी हैं।

कथानायक को अभी तक पिता द्वारा भेजी मनिऑर्डर नहीं मिली। जब पड़ोस की लड़की शांती अपने पति के साथ उसके पास आती है तो नायक को लगता है कि शांती की बच्ची के हात में कुछ भी पैसे न देने से अपना अपमान होगा। शांती की सेहत के बारे में व्यर्थ सोचता है उसके पति ओवर सियर हैं उस पर भी क्रोध करता है क्योंकि वह घूस खाता होगा। अपने पिता के मृत्यु की कामना करना, भूखे पेट में नग्न स्त्रियों के पोस्टर देखने में खुशी मानता है। यहाँ स्पष्ट है कथानायक बेरोजगार है, शादी की आयु हो चुकी है, शादी नहीं कर सकता, अपना पेट पाल नहीं सकता वह शादी कैसे करेगा और अपनी बहन का विवाह करने में असफल हो गया है। कथानायक क्रोधित होकर छोटी बहन को दोष देता है कि वह क्यों नहीं किसी के साथ प्यार करती। यहाँ बड़ी दयनीय स्थिति है कि अपनी खूद की बहन को किसी के साथ प्यार क्यों नहीं होता और न दूसरा कोई उसे प्यार नहीं करता। ऐसा सोचनेवाले युवक के मन में सचमुच क्रोध तो नहीं लेकिन परिस्थितियों के कारण जरूर

आता है। उसे मालुम है कि उसकी कुरूप बहन के साथ कोई प्रेम नहीं करेगा क्योंकि गरीबों से कोई प्यार नहीं करता। उपर्युक्त सभी बातें विपरित आर्थिक स्थिति के कारण उत्पन्न है।

कहानी में व्यक्ति और समाज के द्वंद्व को भिन्न स्तर पर उठाया गया है। नायक को लगता है समाज को ऐसा होना चाहिए किंतु वैसा वह नहीं होता इस कारण वह दु:खी है और सारे दु:ख अपने पर ओढ़ लेता है। उस दु:ख को सुधारने का प्रयास न समाज करता है न कथानायक ने किया है, किंतु वह अकेला यह दु:ख भोग रहा है।

कहानी सरल है। भाषा-शैली उत्कृष्ट है।

अनुभव -

'अनुभव' यह एक सामाजिक कहानी है। शहरों में पराएपन की बढ़ती भावना, गुंडागर्दी का सर्वसामान्य होना, आवास की समस्या, दिशाहीन युवक का गलत मार्ग पर जाना, बेरोजगारी आदि का कहानी में यथार्थ चित्रण हुआ है।

कथानायक को शहर के प्रति बड़ा आकर्षण है। उसने उपरी तौर पर शहर को देखा तो खुशी हुई थी और सच्चाई जानकर रोने लगा था। उसका परिवार, दोस्त-दुश्मन, प्रेमिका सभी शहर में रहते हैं। उसका सतीश नामक दोस्त आयकर अधिकारी उसे फुसलाकर कहता है कि व्यक्ति को हर तरह का अनुभव लेना ही चाहिए। सतीश के साथ रेस्तराँ का अनुभव लेता है। कथानायक 'मैं' बीस रूपये देकर वेश्या के पास जाता है वहाँ उसी लड़की के साथ शादी करने को तैयार होता है लेकिन वेश्या उसके मुँह पर थूक कर उसे बाहर खदेड़ देती है। रात घर जाते समय उसने रेल की पटरी पर बूढ़े व्यक्ति को लालटेन लेकर खड़ा देख वह नाराज हो जाता है और सोचता है कि बीस रूपये में वह बूढ़ा अपने लिए कपड़े ले सकता है। उसने देखा कि जो लोग दिन भर हातगाड़ी पर सामान बेचते हैं उन्हीं लोगों ने रात को उसी हातगाड़ी को खाट बनाया है। यह दृश्य देखकर उसे असली हिंदुस्तान का दर्शन होता है। यहाँ आवास की समस्या दिखाई देती है। असली शहर देखकर कथानायक 'मैं' अपने आप को कोसता है। विश्वनाथ तिवारी कहते हैं - "आज की दुनिया में आदमी के सामने एक बड़ी समस्या

है, लगाव के टूटने की। यह लगाव निरंतर टूट रहा है, टूटता जा रहा है। जितना बड़ा शहर है, जितना ही ऊँचे समाज का आदमी है, उसमें उतना ही लगाव कम है। यह लगाव का टूटना ही उसे सुखी करता है।''[25]

कहानी शहरी जीवन का यथार्थ चित्रण करती है। अनेक सदस्यों के साथ रहनेवाला व्यक्ति भी अकेलापन महसूस करता है। विश्वासघात का प्रमाण बढ़ गया है, स्वार्थ हेतु दूसरों का गला काटना सर्वसामान्य हो गया है। इसकी और भी स्पष्टता के लिए यदुनाथ सिंह का यह कथन द्रष्टव्य होगा - '' 'अनुभव' देश-दर्शन का सा अनुभव प्रदान करती है। एक ही नगर में जिंदगी के विभिन्न स्तर, संवेदना और सोच और जीवन पद्धति के विविध रूप जैसे की सांस्कृतिक संकट की कगार पर खड़े हुए एक ऐसे देश की झाँकी प्रस्तुत करते हैं जिसमें कहीं सामंजस्य, संगति और एकतानता के अंत-सूत्र बाकी नहीं रह गए हैं। एक-एक व्यक्ति परिवार वर्ग जैसे स्वतंत्र संस्था बनकर एक-दूसरे को निहायत तुच्छ और गैर जरूरी समझकर हेय दृष्टि से देख रहे हैं या अपनी तकलीफों के लिए जिम्मेदार समझ कर दूसरे को कठघरे में खड़ा करने के लिए तैयार है।''[26] यह सर्वसामान्य हो गया है कि अपने स्वार्थ के लिए दूसरे का गला काटना या उस पर आरोप लगाना यह शहरों में अधिकतर मात्र में चलता है।

कहानी बहुत लंबी है, भाषा-शैली सरल है, मुहावरे और कहावतों का कई जगह प्रयोग हुआ है, साथ ही अंग्रेजी शब्दों का भी प्रयोग हुआ है।

रचना प्रक्रिया -

'रचना प्रकिया' प्रेम कहानी है। कहानी का कथानायक 'मैं' के रूप में स्वयं लेखक है। कहानी में प्रेम विषयक शहरी लोगों का और गाँव के लोगों का दृष्टिकोण किस प्रकार अलग-अलग है यह दिखाया है। गाँव में प्रेम करनेवालों की धज्जियाँ उड़ाई जाती है, चाहे उनका एक-दूसरे से कितना भी सच्चा प्यार क्यों न हो। शहरों में ऐसी बाते कम होती हैं, हर कोई अपने-अपने काम में रत होता है। लोगों की भीड़-भाड़ में कौन क्या कर रहा है यह देखने का अवसर ही नहीं मिलता।

कहानी का कथानायक 'मैं' गाँव में आई किसी शहरी लड़की के साथ प्रेम करने लगता है। तो गाँव के लोगों ने पर्चा बाँटा और कथानायक को बदनाम करने का प्रयास किया। यहाँ गाँव के लोगों का संकुचित दृष्टिकोण दिखाई देता है। शहरों में एक प्रेम असफल होने पर दूसरा नए सिर से उठता है। जैसे कथानायक 'मैं'

का पहला प्रेम असफल हो गया है इसलिए दूसरा शुरू किया है। शहरी लड़की भी अपने पहले प्रेम विषयक खुले मन से कथानायक 'मैं' को बता देती है। मतलब शहरों में प्रेम को बंधन नहीं होता। कथानायक 'मैं' जीवन में प्यार जरूरी मानता है और स्त्री के बीना जीवन अधूरा मानता है। स्त्रियों को कम समझनेवालों के प्रति कथानायक को दया आती है। कथानायक 'मैं' आगे चलकर विद्रोही बन गया, क्योंकि पर्चे बाँटनेवाले थके नहीं थे। कथानायक 'मैं' उन्हें कुछ गालियाँ भी देता है। इस कहानी के विषय में विश्वम्भरनाथ उपाध्याय कहते हैं - '' 'रचना-प्रक्रिया' में लेखक पुन कलात्मक ऊँचाई पाता है। यहाँ कस्बाई जिंदगी के पिछड़ेपन और लेखक की यौन-स्वच्छंदता में द्वंद्व है लेकिन यहाँ लेखक या नायक अवसादग्रस्त नहीं होता बल्कि अपने में अचानक उग्रता का अभ्युदय पाकर वह रोमांस में विनय प्राप्त कर लेता है और बदनाम करनेवालों को अंगुठा दिखाता है। यहाँ मुहावरे में भी साहसिकता है चिपचिपापन नहीं, जैसा कि शुरू की कहानियों में है।''[27]

कहानी की भाषा-शैली सरल है। कहानी का वैशिष्ट्य है कि इसमें गालियों का भी प्रयोग किया है लेकन वह प्रयोग भी सही जगह पर है इस कारण सार्थक है।

यात्रा -

कहानी का कथानायक 'मैं' के रूप में स्वयं लेखक है। कहानी में एक ऐसे सैनिक अधिकारी का चित्रण किया है जो अपने पिता की मृत्यु की तार मिलते ही छुट्टी लेकर गाँव की ओर निकल पड़ा है, उसी रेल यात्रा में उसके मन में आये विचार ही कहानी है। उसका अपने-आप पर विश्वास नहीं है, वह पहले माँ की एक्स-रे प्लेट देखकर रोता था, आज पिता की मृत्यु की तार पाकर उसे ड़र लग रहा है कि गाँव जाकर वह रो सकेगा या नहीं। वह छुट्टियाँ लेते समय भी अधिकारियों को पिता की मृत्यु का कारण बताना लज्जाजनक समझ रहा है और बहन की शादी का झूठा कारण बता देता है। रेल में दु:खी बुढ़े व्यक्ति को देखकर उसके प्रति दया नहीं उपजती लेकिन उसी वक्त उसे अपनी बीवी और बच्ची का ख्याल आता है। ऐसा क्यों होता है तो उसपर सैनिकी जीवन की कठोरता का प्रभाव हुआ होगा नहीं तो पहले पिता के द्वारा उसे कष्ट भोगने पड़े होंगे।

उसे रेल यात्रा में ही गाँव की याद, पिता की याद, पड़ोसिन बुढ़ी, बंगलेवाली औरत की याद आती है। अपने गाँव पहुँचते ही उसे वैसा ही लग रहा था जैसे वार्षिक छुट्टियों को आते समय लगता था।

अपने गाँव के प्रति भी उसे बड़ा आकर्षण है। इस कहानी के विषय में सुरेश सेठ कहते हैं - '' 'यात्रा' ज्ञान की एक सफल रचना है। मृत्यु का समाचार पाकर अपने शहर की ओर लौटते हुए आर्मि -आफीसर के कथ्य को लेकर कहानी आपके बहुत अंदर तक अपनी पूरी सच्चाई के कारण उतरने की क्षमता रखती है। इस कहानी की सबसे बड़ी सफलता यह है कि पाठक इसमें अपने आप को 'मैं' के साथ आईने के सामने खड़ा पाता है।''[26]

कहानी लंबी है, सरल और सुबोध है, कहानी की भाषा उत्कृष्ट है, आर्मि के लोगों का रहन-सहन और गाँव की प्रकृति आदि का चित्रण बड़ी खूबी से किया है।

घंटा -

'घंटा' कहानी प्रतिकात्मक है। कहानी में कथानायक 'मैं' स्वयं लेखक है, कुंदन सरकार नेता और नेम कथानायक का दोस्त पात्र है। कहानी में उस नेता लोगों पर व्यंग्य किया है, जो कुटनीति के आधार पर बुद्धिजीवियों को अपने जाल में फँसाकर उनका शोषण करते हैं और बुद्धिजीवी भी अपनी बुरी परिस्थितियों के कारण ऐसे नेता के पास जाते हैं और अपनी लालसा पूरी करने का प्रयास करते हैं लेकिन ऐसे धोकेबाज नेता बुद्धिजीवियों को गलत मार्ग पर चलाने को मजबूर करते हैं। इसका यथार्थ चित्रण घंटा कहानी में किया है और अंत में यह दिखाया है कि मध्यवर्गीय बुद्धिजीवी अब शोषकों का विरोध कर रहा है।

कहानी में कुंदन सरकार नामक एक नेता है, जो अपने शहर के सभी बुद्धिजीवियों को अपना चेला बनाता है और उनका तरह-तरह से शोषण करता है। बुद्धिजीवियों के सामने साहित्य की उल्टी सीधी चर्चा करके अपनी विद्वत्ता प्रकट करने का फुहड़ प्रयास भी करता है। उसके पास जो रहता है उसे घंटा कहते हैं, आजकल कथानायक 'मैं' उसका घंटा था। कथानायक 'मैं' जल्दी ही उसके व्यवहार से उब जाता है। एक दिन दोनों शराब पीते हैं और रेस्तराँ में गाना गानेवाली लड़की का फालतू लटकता नाड़ा देखकर 'मैं' हसता है, तो कुंदन सरकार उसे डाँटता है, उसी समय 'मैं' उसे उल्टी-सीधी बाते करता है। यह विरोध कुंदन सरकार का नहीं है, तो उन तमाम शोषकों का है जो मध्यवर्गीय बुद्धिजीवियों का शोषण करते हैं। यहाँ लेखक को यह बताना है कि न कुंदन सरकार अपना परिवेश छोड़कर कथानायक 'मैं' के साथ मेल कर पाता है और न 'मैं' कुंदन सरकार के परिवेश के साथ मेल कर पाता है। 'मैं' अपनी 'पेट्रोला' की जगह ही सुखी रह जाता है। कुंदन सरकार हमेशा

कथानायक से ही बीड़ी पीता है और कथानायक को दिन भर चाय के सिवा और कुछ नहीं देता। गरीबों का शोषण करके अय्याशी करना उनका गुण होता है, जो यहाँ कुंदन सरकार करता है।

इस कहानी के बारे में भीष्म सहानी कहते हैं - ''लेखक के संवेदन में भी एक नई तड़प महसूस होने लगती है और वह मात्र लेखक की निजी तड़प न होकर अपने परिवेश की तड़प बन कर सामने आती है। 'घंटा' शीर्षक कहानी ऐसी ही एक कहानी है।''[29] यहाँ कथानायक उन सभी शोषितों का प्रतीक है जो व्यर्थ ही नेता के चुँगल में फँस जाते हैं।

कहानी की भाषा-शैली सरल सुबोध है। मुहावरे और कहावतों का यथायोग्य प्रयोग हुआ है।

बहिर्गमन -

सामाजिक कहानी है। कहानी में कथानायक 'मैं' के रूप में स्वयं लेखक है। कथानायक का दोस्त मनोहर और मनोहर का दोस्त सोमदत्त अन्य पात्र है। कहानी में ऐसे लोगों का चित्रण किया है जो अपने देश को भद्र समझकर परदेस को श्रेष्ठ मानते हैं। परदेस जाकर कुछ नया सीखकर हमारे यहाँ आकर लोगों के मन में परदेस का आकर्षण पैदा करते हैं। दु:ख की बात यह है कि हमारे यहाँ के सुखी परिवारों में विष घोलने का काम यही लोग करते हैं। इसका यथार्थ चित्रण इस कहानी में किया है।

कहानी में 'मैं' का मित्र मनोहर दिल्ली में रहता है और कुछ भद्र काम करता है, नाम और पैसा कमाता है। सोमदत्त उन लोगों का प्रतिनिधित्व करता है जो हमारे देश को भद्र समझते हैं और परदेस की ओर लोगों को आकृष्ट करते हैं। सोम परदेस में रहता है। 'मैं' उन लोगों का प्रतिनिधित्व करता है। जो युवक बेकार हैं, शिक्षित हैं, ऐसे दिशाहीन युवक काम के लिए दर-दर की ठोकरें खाकर, मनोहर जैसे अयोग्य लोगों के पाँव पकड़ते हैं। मनोहर उन लोगों का प्रतीक है जो परदेस जाना प्रतिष्ठा का लक्षण समझते हैं और अपने आप को बड़े चतुर समझते हैं। मनोहर सोमदत्त के साथ परदेस जाने की इच्छा रखता है तो सामने कुछ शर्ते रखता है कि तुम्हें अपनी पत्नी, माता-पिता सभी को यहाँ छोड़ना पड़ेगा। जब मनोहर अपनी पत्नी को घर से बाहर निकालता है तो पत्नी सोम के पास जाती है तो सोमदत्त उसे कहता है कि तुम्हें तो मनोहर का विरोध करना चाहिए, यहाँ उसकी

चालाकी दिखाई देती है। अंत में मनोहर अपना सुखी परिवार छोड़कर सोमदत्त के साथ हवाई जहाज से परदेस जाता है।

कहानी के द्वारा यह बताया है कि लोग बिना परिश्रम के कमाना चाहते हैं और परदेस का आकर्षण आदि के कारण सुखी परिवार संकट में पल रहे हैं। मनोहर के गाँव में इतनी गहमागहमी होते हुए भी वह परदेस की ओर क्यों आकृष्ट होता है। यहाँ विचारणीय है कि व्यर्थ ही दिखावेपन की भावना और परदेस का आकर्षण इस कहानी का कथ्य है।

कहानी बहुत लंबी है। भाषा-शैली की दृष्टि से कहानी सशक्त है। कहानी में अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग हुआ है।

हास्यरस -

कहानी का कथानायक 'मैं' के रूप में स्वयं लेखक, पत्नी शिखा और पत्नी की छोटी बहन नयना है। कहानी में प्रेम की विड़ंबना, प्रेम की कुरूपता, प्रेमहीनता का बड़ा ही मार्मिक चित्रण किया है और एक पल में बदलने वालों पर व्यंग्य किया है।

कहानी का नायक कुछ घंटे पहले अपनी प्रेमिका के साथ घुमना पसंद करता था लेकिन विवाह होने के बाद पत्नी के साथ चलना भी शर्म की बात मान रहा है। उसे अपने दोस्त दुश्मन लग रहे हैं और पत्नी की छोटी बहन नयना पत्नी से अधिक सुंदर लग रही है। इससे यह स्पष्ट है कि प्रियेसी को प्रियेसी के रूप में मानने में आनंद मानता है लेकिन जीवन के अंत तक साथी के रूप में नहीं मानता। विश्वम्भरनाथ उपाध्याय इस कहानी के संदर्भ में कहते हैं - ''अपने समाज में एक बार विवाह के बंधन में बाँधा जाने के बाद मुक्ति नहीं है न स्वतंत्र संबंधी की इजाजत है। अतएव विवाह किसी स्वचेतना से समृद्ध व्यक्ति के लिए सचमुच त्रासदी ही है। चूँकि विवाह की भूल सुखद मानी जाती है अत: सुख में दु:ख की कल्पनाएँ हास्य पैदा करती हैं और यही कहानी की शक्ति है।''[30]

कहानी की भाषा-शैली सरल है। मुहावरों और अंग्रेजी शब्दों का कहीं-कहीं प्रयोग किया है।

मृत्यु -

कहानी में प्रमुख दो पात्र हैं - कथानायक 'मैं' के रूप में स्वयं लेखक और समाबहादूर नामक नेपाल से भाग आया व्यक्ति है। कहानी आजादी के पूर्व कथानायक के साथ घटित एक घटना की है। देश में उस समय भुखमरी, बेरोजगारी तथा अंग्रेजों के कठोर शासन से जनता घायल हो चूकी थी। यहाँ उसी जनता के प्रतीक 'मैं' और समाबहादूर हैं। कहानी में आर्थिक समस्या तथा अंधश्रद्धा भी दिखाई देती है।

कहानी में शिक्षित बेरोजगार कथानायक 'मैं' अपने परिवार से दूर है और समाबहादूर नेपाल से भाग आया किसान है जो पहले फौज में भरती हो जाता है लेकिन फौज से भागकर समाबहादूर 'मैं' के साथ चाय की दुकान चलाता है। जल्दी ही चाय की दुकान बंद करनी पड़ती है। उसी समय समाबहादुर की मृत्यु हो जाती है। कथानायक 'मैं' अंग्रेजों को गालियाँ बकता है। समाबहादूर और 'मैं' ने कभी बंगला या मोटार गाड़ी का सपना नहीं देखा था। उन्होंने सपना देखा था देश की आजादी का। कहानी का मुख्य विषय समाबहादूर की मृत्यु की जगह उसके मन में देश के प्रति प्रेम बन जाता है। समाबहादूर कायर व्यक्ति और सच्चा दोस्त का प्रतीक माना जा सकता है। समाबहादूर अपने खेत पर कर्ज का बोझ होने के कारण नेपाल से अपनी पत्नी, माता-पिता को छोड़कर मेरठ भाग आया और फौज में भरती हो गया। फौज से भाग कर कथानायक के साथ दोस्ती करता है जो जीवन के अंत तक निभाता है। उसकी इच्छा थी कि भारत को आजादी मिले, बाद में देश को आजादी मिल गई, लेकिन समाबहादूर देखने के लिए नहीं था। यहाँ स्पष्ट है कि आजादी के पूर्व अंग्रेजों का कठोर शासन और उससे घायल जनता और परदेस का व्यक्ति भारत को आजादी मिलने की कामना करना और उसकी सच्ची दोस्ती आदि का यथार्थ चित्रण किया है।

कहानी की भाषा-शैली सरल और सुबोध है। कहानी की कथावस्तु अतीत से संबंध रखती है।

2.5. 'परवर्ती कहानीकारों के मध्य 'ज्ञानरंजन' का स्थान' -

ज्ञानरंजन सातवें दशक के महत्त्वपूर्ण कहानीकार हैं। उनके परवर्ती कहानिकारों में से सिद्धेश, प्रकाश बाधम, रमेश उपाध्याय, जितेंद्र भाटिया, राजकुनार भ्रमर, नरेंद्र कोहली, गोबिंद मिश्र आदि हैं। महिला कहानीकारों में ममता कालिया, निरूपमा सेवती, अनिता औलक, वर्सिका अग्रवाल आदि ने स्त्री के स्वतंत्र

व्यक्तित्त्व के चित्र आँके है। इन सभी कहानीकारों ने जीवन का यथार्थ चित्रण किया है लेकिन ज्ञानरंजन की कहानियाँ व्यक्ति के अंदर की छुपी विकृतियाँ और विद्रुपता को पकड़कर उसे अपनी नई भाषा-शैली के द्वारा व्यक्त किया है। ममता कालिया कहती हैं - "अपने समकालीनों में सबसे अधिक सहज, स्वाभाविक, ज्ञान की कहानियाँ अपनी रोचकता, रवानगी और असर से भी बेजोड़ हैं। ज्ञानरंजन के पास मूलत: एक कवि का हृदय, निबंधकार की शैली, नाटककार की संक्रमण-चेतना और उपन्यासकार का ठहराव है। लेकिन इन सबसे ऊपर ज्ञानरंजन की सशक्त भाषा जिसे वह मुक्के की तरह इस्तेमाल करते हैं या मुस्कान की तरह।"[31] दरअसल ज्ञानरंजन ने किसी फार्मूले में कहानी नहीं लिखी। उनकी कहानियों को 'अकलानी', 'सचेतन' कहानी आदि के नाम से जाना जाता है। ज्ञानरंजन ने अपनी कहानियों में शिल्प का नवीन प्रयोग किया है। हर कहानी पढ़ने पर और एक बार कहानी पढ़ने की इच्छा पाठक के मन में निर्माण होती है। जीवतसिंह कहते हैं - "ज्ञानरंजन ने अपने समय की कहानी को यांत्रिकता से बचाने का उल्लेखनीय कार्य किया था। कहानी में नएपन के कुछ फार्मुले तैयार करके जब लगभग एक जैसी कहानियों का बाजार गर्म था, तब ज्ञान जी लीक से अलग हटकर कुछ ऐसी कहानियाँ लेकर आए थे कि वे मनगठंत न होकर जीवन की उन विकट राहों से निकली कहानियाँ थी जो हमारे आसपास का और भीतर तक विचलित कर देने वाला सच है।"[32] अरविंद त्रिपाठी कहते हैं - "ज्ञानरंजन की जब पिता, बहिर्गमन और घंटा जैसी कहानियाँ पढ़ी तो पहली बार लगा कि हिंदी कहानी की दूसरी दुनिया को स्पर्श कर रहा हूँ। एक सर्वथा नई भाषा, एक नए कथ्य का अनूठा स्वाद।"[33]

ज्ञानरंजन ने अपने पूर्ववर्ती और समकालीन तथा परवर्ती कहानीकारों में से अपनी अलग पहचान बनाई है। उनकी भाषा-शैली, सहजता, सरलता, कथात्मकता का अभाव, यथार्थ चित्रण आदि विशेषताओं के आधार पर अपना अलग सथान रखती है।

निष्कर्ष -

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर स्पष्ट है कि ज्ञानरंजन की कहानियों का केंद्र बिंदू व्यक्ति है वह भी परिवार के बीच से उठाया गया है। ज्ञानरंजन की कुल छब्बीस कहानियों में से बारह कहानियों में परिवार का चित्रण है। पारिवारिक कहानियों के अंतर्गत, विघटन, संघर्ष, संत्रास, अजनबीपन, परायापन आदि का चित्रण

हुआ है। 'कलह', 'फेंस के इधर और उधर', 'शेष होते हुए', 'पिता', 'दिलचस्पी', 'संबंध', 'अमरूद का पेड़', 'चुप्पियाँ', 'गोपनीयता', 'मनहुस बंगला' आदि कहानियाँ उपर्युक्त वक्तव्य का समर्थन करती हैं।

प्रेम और यौन की कुछ कहानियाँ हैं। प्रेम कहानियाँ ऊपरी सतेह पर प्रेम की कहानी लगती है लेकिन उसमें तो प्रेम की विद्रुपता, प्रेमहीनता और परंपरागत रूप से प्रेम कहानी का ढ़ाँचा बदल गया है। 'दिवास्वप्नी', 'खलनायिका' और 'बारूद के फूल', 'सीमाएँ', 'चुप्पियाँ' आदि कहानियाँ प्रेमहीनता और प्रेम की विद्रुपता को स्पष्ट करती है। यौन समस्या विषयक कहानियों में 'छलाँग' और 'याद और याद' है, जिसमें काम भावना दमित न रखें तो व्यक्ति किस प्रकार अलग-अलग प्रकार से उसे शमित करने का प्रयास करने में ही विकृतियाँ और विद्रुपताएँ आती हैं यह दिखाया है।

'घंटा', 'बहिर्गमन', 'यात्रा' कहानियों का कैनवास परिवार छोड़कर देश समाज हो गया है। इनमें सामाजिक विसंगतियाँ, रूढ़ियाँ, नेता की कुटनीति का चित्रण बड़ी खूबी से किया है। यह सभी कहानियाँ लंबी हैं।

ज्ञानरंजन की कुल कहानियों में से सत्रह कहानियाँ 'मैं' के रूप में हैं। कहानियों के मुख्य विषय पीढ़ियों का संघर्ष, पारिवारिक मूल्य विघटन, अंधश्रद्धा, जीवन यथार्थ, राजनीतिक भ्रष्टाचार, आधुनिक शिक्षा प्रणाली, पाखंड पूर्ण आधुनिकता, मध्यवर्गीय नारी के अंतरद्वंद्व, महँगाई, आत्महीनता, आत्मरति, सेक्स, कुंठा आदि का यथार्थ चित्रण कहानियों में हुआ है।

'एक नमुना सार्थक दिन' कहानी में दिखावेपन की भावना पर व्यंग्य किया है। 'दांपत्य' कहानी में पति-पत्नी के सर्वसामान्य संबंध में टूटन है। 'याद और याद' कहानी में सिर्फ पुरानी यादे और आज के जीवन के साथ उसकी तुलना की है।

कहानियों की भाषा-शैली सरल है। बोलचाल के भाषा का प्रयोग किया है। अंग्रेजी शब्द और वाक्यों का भी प्रयोग कहीं-कहीं हुआ है। प्रेम और यौन विषयक कहानियों में निम्नस्तर की भाषा का प्रयोग किया है।

संदर्भ सूची

1. पुष्पपाल सिंह, समकालीन कहानी : सोच और समझ, पृ. 21
2. वही, पृ. 14
3. शिवकुमार शर्मा, हिंदी साहित्य युग और प्रवृत्तियाँ, पृ. 610
4. सं. देश निर्मोही, पल-प्रतिपल, पृ. 53
5. रघुवर दयाल वार्ष्णेय, हिंदी कहानी बदलते प्रतिमान, पृ. 162
6. वही, पृ. 192
7. वही, पृ. 175
8. उपेंद्रनाथ अश्क, हिंदी कहानी अंतरंग पहचान, पृ. 291-292
9. सुरेश सिन्हा, हिंदी कहानी उद्‌भव और विकास, पृ. 606-607
10. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय - द्‌वितीय महायुद्‌धोत्तर हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ. 71
11. सुरेश सिन्हा, हिंदी कहानी उद्‌भव और विकास, पृ. 605
12. वही, पृ. 605
13. सं. सत्यप्रकाश मिश्र, कहानीकार ज्ञानरंजन, पृ. 45
14. ज्ञानरंजन, फेंस के इधर और उधर, पृ. 39-40
15. वही, पृ. 42
16. सं. सत्यप्रकाश मिश्र, कहानीकार ज्ञानरंजन, पृ. 45
17. वही, पृ. 46
18. वही, पृ. 45
19. वही, पृ. 85
20. वही, पृ. 99
21. सं. देश निर्मोही, पल-प्रतिपल, पृ. 117

22. सं. सत्यप्रकाश मिश्र, कहानीकार ज्ञानरंजन, पृ. 102

23. वही, पृ. 42

24. ज्ञानरंजन, क्षणजीवी, पृ. 35

25. सं. सत्यप्रकाश मिश्र, कहानीकार ज्ञानरंजन, पृ. 117

26. वही, पृ. 105

27. वही, पृ. 45

28. वही, पृ. 112

29. वही, पृ. 36

30. वही, पृ. 44

31. वही, पृ. 65

32. सं. देश निर्मोही, पल-प्रतिपल, पृ. 70

33. वही, पृ. 68